शब्द, संवेदना और समझ

प्रमोद कुमार तिवारी*

शब्द और भाषा के सवाल सिर्फ़ अभिव्यक्ति और संप्रेषण के सवाल नहीं होते, भाषा इनसे आगे की यात्रा तय करती है। प्रत्येक शब्द अपनी एक कहानी कहता है, वह अपना इतिहास, अपनी जीवन यात्रा, अपने रिश्तेदारों के बारे में, अपने कद (स्तर) आदि के बारे में महत्वपूर्ण सूचनाएँ देता है। कहा जा सकता है कि प्रत्येक शब्द एक दीपक की तरह होता है जो अपने आस-पास के शब्दों, निकट संबंधियों पर प्रकाश डालकर हमें उनके बारे में भी बताता है। दुनिया की अनेक भाषाओं (इस लेख में हिंदी, अंग्रेज़ी, उर्दू और जापानी भाषा का उदाहरण लिया गया है) के ज़्यादातर शब्दों का निर्माण कुछ बीज शब्दों से हुआ है। शब्दों के इस मूल को जानने के लिए विद्वानों ने व्युत्पत्ति शास्त्र का विकास किया है। व्युत्पत्ति का अपना विशेष महत्त्व है, विद्वानों ने इसका अर्थ बहुज्ञता दिया है और इसे प्रतिभा का संस्कारक माना है। प्रस्तुत लेख में शब्द और व्युत्पत्ति पर बल देने का कारण अध्यापकों-छात्रों को शब्दों को रटने की बजाय उन्हें शब्दों से जुड़ने, समझने और उनकी मज़ेदार व्युत्पत्ति का आनंद लेने हेतु प्रेरित करना भी है।

ब्रह्मबिंदूपनिषद् में एक सूत्र आता है- 'शब्द ब्रह्मणि निष्णातः परब्रह्माधिगच्छिति' अर्थात् शब्द ब्रह्म में निष्णात होने पर ही व्यक्ति परब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। यह सूत्र शब्दों को जानने के साथ-साथ उसके भीतर प्रवेश कर उसे समझने का भी संकेत कर रहा है।

शब्दों के द्वारा हम विचार करना सीखते हैं और विचार के द्वारा ही हम खुद को और जीवन को जान पाते हैं। शब्दों के महत्त्व को बताने वाले ऐसे सैकड़ों प्रसंग मिलते हैं।

किवदंती है कि जब प्रसिद्ध वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बसु से किसी ने पूछा कि ''आपको पौधों में जीवन ढूँढ़ने की प्रेरणा कहाँ से मिली?'' तो उन्होंने जवाब दिया - ''एक बार मेरी माताजी ने बातों ही बातों में बताया कि संस्कृत में पौधे को 'शस्यम्' कहा जाता है। मैंने जब इस शब्द पर विचार किया तो पाया कि यह शब्द शस् + यत् से बना है। शस् शब्द का अर्थ मार डालना या हत्या करना होता है। स्पष्ट है कि हत्या तो उसी की हो सकती है जो जीवित हो, जिसमें जान ही नहीं उसे मारा कैसे जा सकता है? इसलिए मुझे लगा कि अगर विचारकों ने पौधे के लिए शस्यम्

* *परामर्शदाता,* प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एनसीईआरटी, नयी दिल्ली

शब्द का प्रयोग किया है तो इस बात की खोज होनी चाहिए कि क्या पौधों में जान होती है?'' आगे चलकर जगदीश चंद्र बसु ने न केवल पौधों में जीवन की खोज की बल्कि उन्होंने क्रेस्कोग्राफ़ नामक यंत्र का आविष्कार किया। इस यंत्र के माध्यम से विभिन्न उत्तेजकों के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया जा सकता है। सर जगदीश चंद्र बसु ने यह भी सिद्ध किया कि जीवों और वनस्पतियों के उत्तकों में काफी समानता होती है और वे हमारी तरह ही दर्द और लगाव को महसूस कर सकते हैं।

यह प्रसंग बताता है कि एक शब्द भी आपके पूरे जीवन को दिशा दे सकता है, बस शर्त इतनी है कि उस शब्द से आपका जुड़ाव हो यानी आप भाषा और शब्दों को लेकर संवेदनशील हों। 'संवेदना' (सम+वेदना) अपने आपमें एक बहुत ही उपयोगी शब्द है। दरअसल वेदना शब्द का मूल 'विद्' है जिसका अर्थ 'जानना' होता है। इस विद् से ही वेद, विद्वान, विद्या, विद्यार्थी आदि शब्द बनते हैं। वेदना का अर्थ पीड़ा या कष्ट है। अर्थात् कहा जा सकता है कि कष्ट और ज्ञान के बीच एक संबंध है। दूसरे शब्दों में कहें तो कष्ट सहना और दूसरों की पीड़ा को महसूस करना, उससे जुड़ना एक स्तर पर अनुभव और ज्ञान से जुड़ना है जो आपकी विद्वता को बढ़ाता है। प्रसिद्ध हिंदी कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने 'संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना' की बात की थी। उपरोक्त प्रसंग में जगदीश चंद्र बसु ने पौधे की पीड़ा को महसूस किया, उसके साथ संवेदना जताई जिसके परिणामस्वरूप उन्हें संवेदनात्मक ज्ञान मिला और आविष्कार करने की प्रेरणा मिली।

यहाँ इस प्रसंग को थोड़ा विस्तार से बताने का कारण यह दिखाना है कि शब्द और भाषा के सवाल सिर्फ़ अभिव्यक्ति और संप्रेषण के सवाल नहीं होते, भाषा इनसे आगे की यात्रा तय करती है। वैदिक साहित्य (जिसके अंतर्गत संहिता, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक तथा उपनिषद् अथवा वेदांत आते हैं) के विविध पक्षों की व्याख्या करने के लिए जिन ग्रंथों की रचना की गई उन्हें 'वेदांग' कहा जाता है। इनके छः भेद हैं जिनमें से चार (शिक्षा, छन्द, निरुक्त और व्याकरण) भाषा के महत्त्व को स्थापित करते हैं। शब्द के महत्त्व को बताते हुए भाषाविद् रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव लिखते हैं–''भारतीय व्याकरण सिद्धांत में 'शब्द' को मुख्य एवं सर्वोपरि इकाई के रूप में स्वीकार किया गया है। इस धारणा के परिप्रेक्ष्य में ही भाषा के सिद्धांत, व्याकरण एवं शब्दकोश निर्मित किए गए हैं। यहाँ यह भी स्वीकार किया गया है कि भाषा की सर्जनात्मक बुनावट में शब्द ही आधार है तथा शब्द भाषा के वे पूर्वनिर्मित तत्व हैं, जिनके आधार पर क्रमशः बड़े भाषिक खंड, जैसे पदबंध, उपवाक्य, वाक्य आदि निर्मित होते हैं।'' (रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव)

प्रत्येक शब्द अपनी एक कहानी कहता है, वह अपना इतिहास, अपनी जीवन यात्रा, अपने रिश्तेदारों के बारे में, अपने कद (स्तर) के बारे में और यहाँ तक कि अपने वर्ग के बारे में भी महत्वपूर्ण सूचनाएँ देता है। शब्द और अर्थ की सूचना देने वाले शास्त्र को व्युत्पत्ति शास्त्र या निरुक्त कहते हैं। इन दोनों शब्दों का निर्माण निम्न ढंग से हुआ है–व्युत्पत्ति (वि+उत्+पद्+क्तिन– मूल, उत्पत्ति, पूरी जानकारी, प्रवीणता) तथा निरुक्त– (निर्+वच्+क्त–उच्चरित, अभिव्यक्त)। (आप्टे,

वामन शिवराम, 2002) व्युत्पत्ति शब्द के महत्त्व का एक और प्रमाण है। सृजनशीलता की सामर्थ्य उत्पन्न करने वाली शक्ति कारणों) को (खासतौर से साहित्य के क्षेत्र में) तीन भागों में बाटाँ गया है इन्हें 'काव्य हेतु' कहा जाता है यह है- 1. प्रतिभा 2. व्युत्पत्ति और 3. अभ्यास। यह सही है कि इनका संबंध साहित्य से जोड़ा जाता है परंतु ये तीनों हमारे जीवन के सभी क्षेत्रों से संबंधित हैं। विद्वानों (आचार्य राजशेखर) ने व्युत्पत्ति का अर्थ बहुज्ञता दिया है और व्युत्पत्ति को प्रतिभा का संस्कारक माना है। आज के परिवेश में जब 'प्रतिभा' के जन्मजात और दैवी रूप पर तमाम सवाल उठ रहे हैं और इसका संबंध नस्लवाद तक से जोड़ा जा रहा है, तब व्युत्पत्ति और प्रतिभा के बीच भेद भी कम हुआ है। तात्पर्य यह कि शब्दों की जानकारी का सीधा संबंध चिंतन, नवोन्मेष और सृजनशीलता से जुड़ता है। किसी शब्द का अर्थ निकालना उसका विभिन्न बातों से संबंध जोड़ना, एक नयी बात या नये अर्थ तक पहुँचना हो जाता है। भाषा की लघुतम इकाई वर्ण है परंतु भावाभिव्यक्ति की वास्तविक लघुतम इकाई वाक्य है। किसी भी वाक्य को अर्थ देने में केंद्रीय भूमिका शब्द की होती है। जब शब्द वाक्य में प्रयुक्त हो जाते हैं अर्थात् संदर्भ से जुड़ जाते हैं तो उन्हें पद कहा जाता है। इसलिए कहा जा सकता है कि अर्थ इन्हीं पदों (पैरों) पर चलकर हम तक पहुँचता है। दुनिया की समस्त वस्तुओं को पदार्थ (पद का अर्थ) कहा जाता है। आचार्य दंडी ने भाषा के अभाव में पूरे संसार में अंधकार होने की जो बात की थी उसकी सार्थकता 'पदार्थ' से जुड़ती है।

निश्चित रूप से पद अपने अर्थ को बदलता रहता है इसलिए पदार्थ का हमारा बोध भी बदलता रहता है। कई बार ये अर्थ इतने बदल जाते हैं कि मूल अर्थ कहीं पीछे छूट जाता है। कई बार ये बदलाव बड़े मज़ेदार होते हैं। उदाहरण के लिए एक प्रचलित शब्द है 'स्कूल'। अक्सर इस शब्द को सुनते ही छोटे बच्चों के पसीने छूट जाते हैं और दिमाग में भारी बस्ता, मास्टरजी की छड़ी, सुबह-सुबह नहाना और बस के लिए भागने जैसे दृश्य बार-बार सामने आते हैं। 'स्कूल' शब्द ग्रीक भाषा का मूल शब्द है जिसका उच्चारण schole होता है और इसका मूल अर्थ leisure है यानी फ़ुर्सत का या अवकाश का समय जिसमें आमतौर पर आप आनंद का अनुभव करते हैं।

प्रत्येक शब्द का किसी इंसान की तरह अपना एक जीवन होता है और वह उतना ही रोचक होता है, प्रस्तुत लेख में शब्द पर बल देने का एक कारण अध्यापकों-छात्रों को शब्दों को रटने की बजाय उन्हें शब्दों से जुड़ने, उसे अनुभव करने और समझने हेतु प्रेरित करना है। विशेष रूप से पारिभाषिक एवं तकनीकी शब्दों से छात्रों / छात्राओं को अधिक परेशानी होती है। जिन शब्दों को वे पहली बार सुनने के बावजूद आसानी से समझकर उसका अर्थ निकाल सकते हैं उन्हें भी वे रटते हैं। ज़्यादातर शब्दों का निर्माण कुछ बीज शब्दों में उपसर्ग, प्रत्यय या अन्य शब्दों को जोड़कर किया जाता है। आमतौर पर हम प्रत्यय आदि के अर्थ को बहुत महत्त्व नहीं देते परंतु 'दौड़ता' का 'ता', 'बचपन' का 'पन', 'परिचय' का 'परि' आदि भी खास अर्थ देते हैं। कुछ विद्व ानों ने प्रत्यय और उपसर्ग को शब्दांश कहा है और इनके अर्थ को उतनी प्रमुखता नहीं दी है। इस संदर्भ में डॉ. रामदेव त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी भाषानुशासन' में लिखा है-'यदि प्रत्यय

को शब्दांश कहा जाए तो प्रकृति को भी शब्दांश कहना चाहिए। 'शक्ति' शब्द में 'ति' प्रत्यय ही शब्दांश नहीं है, 'शक्' प्रकृति भी शब्दांश ही है। रूढ़ि के कारण आगे जाकर शब्द का अर्थ केवल प्रकृति रह जाता है इसलिए शब्दकोशों में केवल प्रकृतियों के अर्थ दिए जाते हैं, प्रत्ययों के नहीं।'

संरचना के स्तर पर शब्दों को मुख्यत: तीन भागों में बाँटा गया है। रूढ़, यौगिक और योगरूढ़। इन तीनों शब्दों के उदाहरण के रूप में हम क्रमश: **जल, जलज** और **जलचर** को ले सकते हैं। रूढ़ शब्द किसी भाषा के मूल में होते हैं और भाषा के प्रथम चरण में इनकी संख्या काफी ज़्यादा होती है। यही कारण है कि लोकभाषाओं में ऐसे शब्द प्रचुरता से मिलते हैं। जब कोई भाषा प्रशासन, शिक्षा, तकनीक आदि से जुड़ने लगती है तो उसमें यौगिक शब्दों की संख्या बढ़ने लगती है। पारिभाषिक एवं तकनीकी शब्दावली में जिन शब्दों से विद्यार्थी अक्सर घबराते हैं वे यौगिक शब्द ही होते हैं। अगर हम थोड़ी संवेदना से यौगिक शब्दों को देखें तो हम उनके मूल अर्थ को पकड़ सकते हैं। उदाहरण के लिए –

ख(आकाश)– खग (पक्षी), खगेन्द्र (पक्षियों का राजा), खद्योत (जुगनू), खगोल।

परि (चारों ओर)– परिआवरण या पर्यावरण, परिक्षेत्र, परिपथ, परिषद्, परिश्रम, परिसर, परिभाषा, परिकल्पना, परिचय, परिजन, परिशिष्ट।

रस– रसीला, रसभरी, रसगुल्ला, रस+अयण= रसायन।

वात(हवा)– वातावरण, वातानुकूलित, वातायन (खिड़की), वातचक्र

यह बात सिर्फ़ हिंदी भाषा पर ही लागू नहीं होती। दुनिया की ज़्यादातर भाषाओं में शब्दों का निर्माण इसी प्रकार होता है और अगर इनकी प्रकृति को समझने की कोशिश की जाए तो इनके अर्थ को आसानी से समझा जा सकता है। जैसे– उर्दू में–

नज़र–नज़रअंदाज, नज़रबंद, नज़रबाज, नज़राना

कम–कमअक्ल, कमज़ोर, कमबख्त(अभागा), कमजर्फ़, कमयाब

बा–बाअदब, बाईमान, बाख़बर, बावुजूद, बाहवास (मुहम्मद मुस्तफा खाँ मद्दाह, 1992)

जापानी में*

Ji (Earth/Ground)- Jishin= Earthquake, Jimoto= Native place

Ka(House)- Katei=Household, Kaji- household work, Kanai- wife, Kacho= Head of family, Katokeu=Family property

Sen (Before)- Senshu=Last week, Sengetsu=Last month

अंग्रेज़ी में–

paidos(Greek word)= Child— Pedagogy, Padiatrics, Paediatrician

philo=Love, sophy=wise- (Phylosophy = Love of Wisdom)

इसी तरह फ़िलोलॉजी, फ़िलॉनथ्रोपी आदि शब्द बन जाते हैं जो क्रमश: शब्द और मानवता के प्रति प्रेम को दर्शाते हैं। अंग्रेज़ी का फ़िलॉसफ़ी शब्द 'विद्वता के प्रति प्रेम' का अर्थ देता है वहीं हिंदी में इसके अर्थ में प्रयुक्त 'दर्शन' शब्द दृश्य, दृष्टि, दर्शक, द्रष्टा, दर्शन, दार्शनिक के रूप में विकसित होता है। निश्चित रूप से जो भाषा हमारे अधिक करीब होगी, जिसकी संस्कृति से हम अधिक जुड़े होंगे उसमें हमारी गति अधिक होगी।

अंग्रेज़ी की तुलना में फ़ारसी के शब्द हमें ज़्यादा करीब लगेंगे क्योंकि वह सांस्कृतिक एवं

**प्रवीण कुमार*– एम.ए. जापानी भाषा; जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली–110067 के साथ चर्चा पर आधारित

भौगोलिक रूप में हमारे निकट की है। संस्कृति से जुड़ाव के स्तर पर भाषा से एक अलग संबंध बनता है क्योंकि किसी भी शैक्षणिक प्रक्रिया में संस्कृति की बड़ी भूमिका होती है। उदाहरण के लिए हम दो शब्द 'सेब' और 'गोबर' का उदाहरण ले सकते हैं जिनका यूरोप और भारत की संस्कृति से विशेष संबंध है। जहाँ गोबर हमारे मस्तिष्क को गोबर गणेश, गोबर्धन आदि से लेकर गाय और लोकगीतों में आने वाले गोबर के अनेक संदर्भों से जोड़ता है वहीं सेब का संबंध इसाई मिथकों से लेकर आदम-हव्वा के ज्ञान प्राप्ति की घटना से जुड़ता है। इस प्रकार शब्द संस्कृतियों और पुरानी परंपराओं के वाहक होते हैं। यहाँ तक कि एक ही अर्थ के वाचक शब्द 'सूर्य' और 'दिनकर' या 'जल' और 'पानी' हमारे भीतर भिन्न संवेदनाएँ जगाते हैं।

तात्पर्य यह कि कोई भी व्यक्ति (शिक्षा क्षेत्र से जुड़े लोग खासतौर से) अगर 'संवेदनात्मक भाषा और भाषात्मक संवेदना' की दृष्टि से अपने विषय को देखने की कोशिश करे तो वह सामान्य अर्थ के अतिरिक्त भी अपने विषय में कुछ जोड़ सकता है। आचार्य दण्डी ने कहा था कि 'भाषा वह प्रकाश है जिसके कारण हम दुनिया की चीज़ों को देख पाते हैं।' अगर हमारे पास इतनी क्षमता हो कि हम इस प्रकाश के निष्क्रिय उपभोक्ता की बजाय सक्रिय प्रयोगकर्ता बन जाएँ तो यह प्रकाश हमें और भी बहुत कुछ दे सकता है। रूपक के रूप में कहें तो जैसे स्थिर टार्च के प्रकाश से हमें किसी वस्तु का एक पक्ष नज़र आता है, परंतु यदि उसी टार्च का हम मनमाफ़िक उपयोग कर वस्तु विशेष के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालें तो हमें उस वस्तु के कई पक्ष देखने को मिल जाते हैं। शब्द एवं भाषा के प्रति हमारी संवेदना भी कुछ ऐसा ही काम करती है, वह नये पहलुओं को सामने ले आती है। वर्तमान समय में यह बात और भी प्रासंगिक हो गई है क्योंकि अब ज्ञान और सूचना ताकत बन गए हैं और इस ताकत का मुख्य माध्यम शब्द और भाषा है क्योंकि इसी के बल पर मानसिकता निर्माण का कार्य किया जाता है। ज्ञान और सूचना प्राप्त व्यक्ति उत्तरोत्तर खुद को उचित साबित करता जाता है और इसके साथ ही वह हर दृष्टि से समृद्ध भी होता जाता है। वह व्यक्ति और उससे संबद्ध लोग लगातार अधिकाधिक ज्ञान (धन और ताकत भी) प्राप्त करते जाते हैं। इस पूरी प्रक्रिया का संबंध शिक्षा से जुड़ता है। स्पष्ट है कि शिक्षा और भाषा के बीच एक गहरा संबंध है। शिक्षा की माध्यम भाषा यह तय करती है कि उस विषय की हमारी समझ कैसी होगी। इस बात का प्रगाढ़ संबंध उस भाषा से जुड़ता है जिससे हमारा जुड़ाव जन्म के साथ होता है। एक भाषा हमें सूचनाओं से अधिक जोड़ती है वहीं दूसरी भाषा हमारी संस्कृति से जुड़ी होती है इसलिए जब हम उस भाषा के माध्यम से किसी विषय से जुड़ते हैं तो वह जानकारी सिर्फ़ सूचनात्मक नहीं होती, साथ ही अवधारणात्मक भी होती है।

भाषा के प्रति संवेदनशील जुड़ाव के कारण ही पूरी दुनिया के शिक्षाशास्त्री प्राथमिक कक्षाओं में मातृभाषा पर विशेष बल देते हैं। मातृभाषा का संबंध अवधारणा और बोध से अधिक जुड़ता है। मातृभाषा में हमें शब्दों और पदों को रटना नहीं पड़ता, क्योंकि वे हमारे लिए बिल्कुल नए नहीं होते। मातृभाषा हमें शब्द और वाक्य ही नहीं सिखाती, वह संस्कृति से जोड़ती है। वह

छात्र के मन-मस्तिष्क में उसके रीति-रिवाज़ों, परंपराओं (रूढ़ियों), मिथकों, कथाओं आदि को इस तरह रचा-बसा देती है कि वह उसकी चिंतन प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन जाता है। भविष्य में जब वह अपनी मातृभाषा के कुछ नये शब्द भी सुनता है तो उस शब्द विशेष के किसी-न-किसी हिस्से को अपनी स्मृति और संस्कृति से जोड़ पाता है। मातृभाषा हमारी रगों में बहने लगती है इसीलिए उसके शब्दों और कथाओं से हमारा ऐसा अपनापन का रिश्ता बन जाता है कि उस भाषा के शब्द अपने अर्थ की ओर संकेत करने लगते हैं या अपनी कहानी खुद बताने लगते हैं।

उदाहरण के लिए अगर हम वात् (वायु) शब्द से अच्छी तरह परिचित हैं तो हमें पहली बार सुनने पर भी 'वातावरण', 'वातायन', 'वातानुकूलित' आदि का एक अर्थ समझ में आ जाएगा। दरअसल, हमारे मस्तिष्क में स्मृतियाँ एक ऐसे विशाल मकान में रहती हैं जिसमें बहुत सारे कमरे बने हुए हैं। जिस प्रकार आप एक कमरा खोलते हैं तो उसमें रखी बहुत सारी वस्तुओं पर आपकी नज़र पड़ती है, उसी तरह हमारा मस्तिष्क भी एक संदर्भ से जुड़ी अनेक बातों को एक साथ ले आता है। उदाहरण के लिए अगर किसी ने भोपाल नाम लिया तो भोपाल से संबंधित अनेक बातें अचानक आपके मस्तिष्क में आ जाएँगी, मसलन, भोपाल में आपका कोई संबंधी हो तो उसकी याद, भोपाल में आपने समय बिताया हो तो वह स्थान, भोपाल से संबंधित प्रसिद्ध व्यक्ति या संस्थान की याद, भोपाल के झील, भोपाल की सुघटनाएँ-दुर्घटनाएँ आदि। यानी हम कह सकते हैं कि प्रत्येक शब्द एक दीपक की तरह होता है जो अपने आस-पास के शब्दों, निकट संबंधियों पर प्रकाश डालकर हमें उनके बारे में भी बताता है।

इस प्रकार हम दैनिक जीवन में प्रयोग करने वाले अत्यंत परिचित शब्दों को भी थोड़ा ग़ौर से देखें तो वे हमें नये अर्थों से जोड़ते नज़र आएँगे। धीरे-धीरे जब शिक्षकों एवं छात्रों को इसकी आदत पड़ जाएगी तो वे शब्दों का और भाषा का अधिक संवेदनशील प्रयोग करने में और अनजान शब्दों के भी अर्थ निकालने में सक्षम हो जाएँगे।

संदर्भ

आप्टे, वामन शिवराम. 2002. *संस्कृत-हिन्दी कोश.* नाग पब्लिशर्स, जवाहर नगर, दिल्ली, पुनर्मुद्रित आठवां संस्करण.

मद्दाह, मुहम्मद मुस्तफा खाँ. 1992. *उर्दू-हिन्दी शब्दकोश.* उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, सप्तम संस्करण.

शर्मा, डॉ. रामविलास. 2002. *भाषा और समाज.* राजकमल प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण.

श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ-*शब्द की परिभाषा तथा उसके अर्थ प्रतिपादन का परिप्रेक्ष्य- हिंदी के विशिष्ट संदर्भ में;* इग्नू एम.ए. हिन्दी पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष; एमएचडी-07, इकाई 9 (www.egyankosh.ac.in)

हिन्दी साहित्य कोश, भाग 1(संपादित); ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, तृतीय संस्करण-1985, पुनर्मुद्रण 2009

त्रिपाठी, आचार्य रामदेव. 1986. *हिन्दी भाषानुशासन.* बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, प्रथम संस्करण.